

भारत में तकनीकी शिक्षा का विकास

डॉ. संगीता कुमारी

एसोसिएट प्रोफेसर

आर्यभट्ट कॉलेज, साउथ कैम्पस, दिल्ली विश्वविद्यालय,

sangeetajnu2011@gmail.com

अमूर्त

ब्रिटिश शासन के तहत शिक्षा प्रणाली कैसे विकसित हुई, इस पर कई विद्वानों ने शोध किया है। इतिहासकारों और विद्वानों ने औपनिवेशिक शिक्षा के विभिन्न पहलुओं जैसे नियमित, चिकित्सा और तकनीकी शिक्षा को समझने की कोशिश की है। भारत एक क्लासिक मामला था जहां एक कॉलोनी में तकनीकी शिक्षा की दोहरी प्रकृति को तकनीकी रूप से प्रशिक्षित पुरुषों की मांग के जवाब के रूप में प्रयोग किया जाता है और तकनीकी ज्ञान की मदद से भविष्य में अर्थव्यवस्था को विकसित करने के साधन के रूप में भी प्रयोग किया जाता है। शिक्षा, विशेष रूप से तकनीकी शिक्षा ने उपनिवेशवादियों और उपनिवेशों दोनों की आर्थिक और राजनीतिक मांगों का जवाब दिया। उन्नीसवीं सदी के पूर्वार्द्ध के दौरान साम्राज्यवाद और उपनिवेशवाद की प्रक्रिया को विकसित करने के लिए विज्ञान का उपयोग बहुत महत्वपूर्ण था और यह पूरी प्रक्रिया का अपवाद नहीं थी। ब्रिटिश भारत के इतिहास में शिक्षा, विज्ञान और प्रौद्योगिकी, साम्राज्यवाद और एक विकसित होते हुए राष्ट्रवाद के बीच घनिष्ठ भागीदारी थी।

मूल शब्द : औपनिवेशिक शिक्षा, तकनीकी शिक्षा, अर्थव्यवस्था, साम्राज्यवाद, उपनिवेशवाद

भारत में तकनीकी शिक्षा का विकास (1920-1947)

ब्रिटिश शासन के तहत शिक्षा प्रणाली कैसे विकसित हुई, इस पर कई विद्वानों ने शोध किया है। इतिहासकारों और विद्वानों ने औपनिवेशिक शिक्षा के विभिन्न पहलुओं जैसे नियमित, चिकित्सा और तकनीकी शिक्षा को समझने की कोशिश की है। प्रस्तुत पत्र 1920-1947 की अवधि के दौरान भारत में तकनीकी शिक्षा के विकास पर चर्चा करेगा। डैनियल हेड्रिक ने तर्क दिया है कि जब तकनीकी शिक्षा के विकास की बात आती है तो भारत सबसे दिलचस्प उपनिवेश है। यह एक क्लासिक मामला है जहां एक कॉलोनी में तकनीकी शिक्षा की दोहरी



प्रकृति का प्रयोग तकनीकी रूप से प्रशिक्षित पुरुषों की मांग के जवाब के रूप में किया जाता है और तकनीकी ज्ञान की मदद से भविष्य में अर्थव्यवस्था को विकसित करने के साधन के रूप में भी किया जाता है। शिक्षा, विशेष रूप से तकनीकी शिक्षा ने उपनिवेशवादियों और उपनिवेशों दोनों की आर्थिक और राजनीतिक मांगों का जवाब दिया। पूरी प्रक्रिया में विभिन्न स्तरों पर बहुत सारे विरोधाभास देखे गए।¹ उन्नीसवीं सदी के पूर्वार्द्ध के दौरान साम्राज्यवाद और उपनिवेशवाद की प्रक्रिया को विकसित करने के लिए विज्ञान का उपयोग बहुत महत्वपूर्ण था और यह पूरी प्रक्रिया का अपवाद नहीं था। इस प्रकार, ब्रिटिश भारत के इतिहास में शिक्षा, विज्ञान और प्रौद्योगिकी, साम्राज्यवाद और अविकसित राष्ट्रवाद के बीच घनिष्ठ भागीदारी थी। इस संदर्भ में डब्ल्यूएल बर्न ने तर्क दिया है कि "भारत ने आयरलैंड के मामले की तरह ही एक सामाजिक प्रयोगशाला का गठन किया, जहां सबसे पारंपरिक अंग्रेज उन लाइनों पर प्रयोग करने के लिए तैयार थे जिन पर वे घर पर विचार करने या सहन करने के लिए तैयार नहीं थे।"²

शिक्षा के क्षेत्र में औपनिवेशिक हस्तक्षेप की शुरुआत 1813 के चार्टर अधिनियम के साथ हुई, जिसने शैक्षिक उद्देश्यों के लिए सालाना एक लाख रुपये निर्धारित किए। 1854 के निदेशक न्यायालय ने सार्वजनिक निर्देश को एक सरकारी जिम्मेदारी बना दिया। इससे पहले मिशनरी और परोपकारी सक्रिय रूप से औपनिवेशिक भारत के कई हिस्सों में शिक्षा का प्रसार करने की कोशिश कर रहे थे। 1854 का अधिनियम माध्यमिक शिक्षा के विस्तार के बारे में लाया, उन स्कूलों के बारे में जिसमें अंग्रेजी शिक्षा का माध्यम था और अंत में विश्वविद्यालय प्रवेश परीक्षा के मानक को बनाए रखने पर ध्यान केंद्रित किया गया। लॉर्ड मेयो ने शिक्षा के मामले का विकेंद्रीकरण किया और स्थानीय सरकारों ने 1871 के बाद से अपने-अपने प्रांतों में शैक्षिक मामलों पर कब्जा कर लिया।³ यहां उल्लेख किया जा सकता है कि 1813 के चार्टर अधिनियम ने भारत में विज्ञान और साहित्य के पुनरुद्धार और सुधार के लिए 1,00,000 रुपये का अनुदान प्रदान किया। कंपनी के प्राच्यविदों ने संस्कृत कॉलेजों की स्थापना के लिए इसका उपयोग किया। राजा राम मोहन राय सहित कई भारतीयों ने

¹ डैनियल आर. हेड्रिक, *द टेंटेकल्स ऑफ प्रोग्रेस: टेक्नोलॉजी ट्रांसफर इन द एज ऑफ इंपीरियलिज्म, 1850-1940*, न्यूयॉर्क, ओयूपी, 1988, पीपी.315-316।

² रॉय एम. मैकलियोड, 'ब्रिटिश इंडिया के लिए वैज्ञानिक सलाह: इंपीरियल परसेप्शन एंड एडमिनिस्ट्रेटिव गोल्स', *मॉडर्न एशियन स्टडीज*, वॉल्यूम 9, नंबर 3, 1975, पृष्ठ 344।

³ के.डी. भार्गव, *भारत सरकार के शैक्षिक रिकॉर्ड से चयन, भारत में खंड IV तकनीकी शिक्षा, 1886-1907*, नई दिल्ली, प्रकाशन प्रबंधक, भारत सरकार, 1968, पीपी 3-7।



आपत्ति जताई और उन्होंने शरीर रचना विज्ञान, गणित, प्राकृतिक दर्शन, रसायन विज्ञान, जीव विज्ञान पढ़ाने के लिए यूरोप के योग्य वैज्ञानिकों के साथ कॉलेजों की स्थापना की सिफारिश की। कैंबेल्, कोलब्रुक और प्रिंसेप टायलर और अन्य ने लगातार स्वदेशी शिक्षा प्रणालियों और संस्थानों के पूर्ण उपयोग का समर्थन किया।⁴ 1840 के लॉर्ड ऑकलैंड के मिन्ट ने 'एंग्लिसिस्टों' और 'प्राच्यवादियों' के बीच विवाद को समाप्त कर दिया और यह 'एंग्लिसिस्टों' के पक्ष में तय किया गया। 1854 के अधिनियम के साथ सार्वजनिक निर्देश राज्य का दायित्व बन गया। बाद में प्राथमिक शिक्षा के प्रसार की आवश्यकता महसूस की गई और इसे मान्यता दी गई, लेकिन 1854 तक किसी भी सरकारी रिपोर्ट में तकनीकी शिक्षा के बारे में कोई संदर्भ नहीं पाया गया और यह केवल 1854 के अधिनियम में था कि भारत में तकनीकी शिक्षा के बारे में बात करने वाला एक मार्ग मिल सकता है:-

"हमारा ध्यान अब एक विचार की ओर निर्देशित किया जाना चाहिए जो और भी अधिक महत्वपूर्ण है, जो अब तक बहुत अधिक उपेक्षित था अर्थात् जीवन के हर स्टेशन के लिए उपयुक्त उपयोगी और व्यावहारिक ज्ञान को उन लोगों के महान समूह तक कैसे पहुंचाया जा सकता है जो अपने स्वयं के बिना सहायता प्राप्त प्रयासों से जनता के योग्य किसी भी शिक्षा को प्राप्त करने में पूरी तरह से असमर्थ हैं; और हम इस उद्देश्य के लिए भविष्य के लिए सरकार के सक्रिय उपायों को विशेष रूप से निर्देशित देखना चाहते हैं, जिसकी प्राप्ति के लिए हम व्यय में काफी वृद्धि को मंजूरी देने के लिए तैयार हैं।⁵

यह कोई संयोग नहीं था क्योंकि ब्रिटेन में भी यह वह समय था जब तकनीकी शिक्षा शुरू की गई थी और प्रदान की गई थी और 1851 से सरकार द्वारा नई तकनीक के उपयोग से उनकी उत्पादकता बढ़ाने के लिए विनिर्माण इकाइयों को सहायता अनुदान की एक प्रणाली प्रदान की गई थी। अपने लक्ष्य को प्राप्त करने के लिए ब्रिटेन में सरकार ने 1853 में विज्ञान और कला विभाग की स्थापना की और तीन साल बाद इसे शिक्षा विभाग के तहत

⁴दीपक कुमार, साइंस एंड द राज: ए स्टडी ऑफ ब्रिटिश इंडिया, दूसरा संस्करण, ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस, नई दिल्ली, 2006, पृष्ठ 48।

⁵एस . एन. सेन, भारत में वैज्ञानिक और तकनीकी शिक्षा 1781-1900, भारतीय राष्ट्रीय विज्ञान अकादमी, नई दिल्ली, 1991, पृष्ठ 370।



लाया गया।⁶ 1882 के शिक्षा आयोग ने तकनीकी शिक्षा के बारे में बात नहीं की, लेकिन इसने माध्यमिक शिक्षा की मौजूदा प्रणाली की एकतरफता को उजागर किया। आयोग ने हाई स्कूलों में पाठ्यक्रम की एक शाखा की वकालत की। एक पाठ्यक्रम विश्वविद्यालय की ओर ले जाने वाला और दूसरा तकनीकी शिक्षा के लिए उपयुक्त था।

भारत में उस समय शिक्षा अनिवार्य नहीं थी। मूल जनता के लिए शिक्षा को अनिवार्य बनाने से संबंधित कोई सरकारी नियम नहीं थे। यह देखते हुए कि जनता का बड़ा हिस्सा विज्ञान और तकनीकी शिक्षा के बारे में चिंतित नहीं था, यह बुद्धिजीवी वर्ग था जो विज्ञान और तकनीकी शिक्षा के लिए महसूस करता था।⁷ सरकारी नौकरी और अन्य आकर्षक करियर पाने के लिए अंग्रेजी शिक्षा बहुत महत्वपूर्ण हो गई, इसलिए बड़े शहरों में लोगों ने इसे अपनाना शुरू कर दिया। लेकिन बंगाल में उच्च वर्ग के लोग अभी भी शारीरिक काम से घृणा कर रहे थे और सिविल इंजीनियरिंग कॉलेज के प्रिंसिपल एमजे ऑल्टर ने जिला स्कूलों में तकनीकी कक्षाएं स्थापित करने के लिए एक योजना प्रस्तुत करने की कोशिश की तो उन्होंने पूरे परिदृश्य की व्याख्या की और वे कहते हैं :-

उन्होंने कहा, 'इस प्रस्ताव के पीछे मेरा कारण यह है कि प्रत्येक जिले के मुख्य पब्लिक स्कूल में तकनीकी कक्षाएं खोलने से माता-पिता और छात्र दोनों उस पूर्वाग्रह से उबर सकते हैं जो अब *मिस्त्रीखाना के खिलाफ मौजूद है*, एक ऐसा नाम जिसके द्वारा कई तकनीकी स्कूल जाते हैं। इस बदलाव से लोग यह पहचान लेंगे कि शैक्षिक विशेषज्ञ जिन्होंने उन्हें अब तक केवल एक साहित्यिक कैरियर के लिए प्रशिक्षित किया है, तकनीकी शिक्षा को अब तक दी गई शिक्षा के साथ समानता पर खड़े होने के रूप में देखते हैं।⁸

प्रारंभ में कलकत्ता विश्वविद्यालय भी एक ऐसी योजना तैयार करने में अनिच्छुक था जिसके माध्यम से व्यावहारिक और तकनीकी विषयों में छात्रों की प्रगति का आकलन किया जा सके। 1886 के अंत में कलकत्ता

⁶ के.डी. भार्गव, *भारत सरकार के शैक्षिक अभिलेखों से चयन, खंड IV भारत में तकनीकी शिक्षा, 1886-1907, प्रकाशन प्रबंधक, भारत सरकार, नई दिल्ली, 1968, पृष्ठ 2।*

⁷ आर. नाथन, भारत में शिक्षा की प्रगति 1897-98-1901-02, खंड 1, सरकारी मुद्रण अधीक्षक का कार्यालय, कलकत्ता, 1904, पृष्ठ 2।

⁸ बंगाल सरकार के सचिव को ए पेडलर, निदेशक सार्वजनिक निर्देश, बंगाल का पत्र, गृह विभाग की कार्यवाही, शाखा: शिक्षा, जनवरी 1902, संख्या 108, पृष्ठ 362, आईओआर/पी/6343।



विश्वविद्यालय ने बंगाल में सार्वजनिक शिक्षा के तत्कालीन कार्यवाहक निदेशक सीएच तवनी द्वारा एक व्यावहारिक चरित्र की वैकल्पिक प्रवेश परीक्षा आयोजित करने के प्रस्ताव को खारिज कर दिया था।⁹ सिबपुर में स्कूल ऑफ आर्ट और सिविल इंजीनियरिंग कॉलेज उस समय बंगाल में सबसे महत्वपूर्ण तकनीकी संस्थान थे। उत्तरार्द्ध में कुछ दिशाओं में तकनीकी निर्देश को बढ़ावा दिया। इन दो अत्यधिक कुशल संस्थानों के अलावा तकनीकी और औद्योगिक स्कूल काम कर रहे थे और बंगाल में छात्रों को तकनीकी ज्ञान प्रदान करने का मूल्यवान कार्य कर रहे थे। कुछ तकनीकी ज्ञान प्राप्त करने के बाद बंगाल के लोगों ने आजीविका के गैर-साहित्यिक साधनों की तलाश शुरू कर दी।

1899 में सिविल इंजीनियरिंग कॉलेज, सिबपुर के प्रिंसिपल ने बंगाल में तकनीकी शिक्षा के विस्तार के लिए एक योजना का प्रस्ताव रखा। योजना जिला स्कूलों में तकनीकी कक्षाएं आयोजित करने की थी। एक बार जब छात्र तकनीकी विषयों के सिद्धांत और व्यावहारिक पाठ्यक्रम को सफलतापूर्वक पूरा कर लेते हैं, तो उन्हें सब ओवरसियर प्रमाण पत्र प्राप्त होंगे। यह उन्हें सर्वेक्षक या उप पर्यवेक्षकों के रूप में नियुक्ति के लिए पात्र बना देगा या यदि वे उच्च शिक्षा जारी रखना चाहते हैं तो उन्हें इंजीनियरिंग के स्कूल में प्रवेश मिलेगा।¹⁰ हालांकि प्रयोग अच्छा था, लेकिन इसमें कुछ कमियां थीं। इसमें केवल उन विषयों में तकनीकी शिक्षा प्रदान की गई थी जो इंजीनियरों के लिए अनिवार्य थे। इसमें उद्योगों, वाणिज्य आदि से संबंधित कोई निर्देश नहीं दिए गए थे। इस मुद्दे को हल करने के लिए पेडलर ने कहा कि सभी क्षेत्रों की आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए तीन अलग-अलग तरह की तकनीकी शिक्षा होनी चाहिए। वे थे 1) जो इंजीनियरिंग और भवन व्यापार की कई शाखाओं को जन्म देंगे, 2) जो उन लोगों को सक्षम करेगा जो खुद को वाणिज्य के लिए समर्पित करना चाहते हैं और 3) जो विभिन्न प्रकार के उद्योगों को बढ़ावा देने में मदद करेंगे।¹¹

बंगाल सरकार ने अंततः अध्ययन के पृथक्करण को स्वीकार कर लिया, जिससे तकनीकी और सामान्य अध्ययन अलग हो गए। तकनीकी अध्ययन को कामगार की नौकरी, औद्योगिक और वाणिज्यिक करियर की आवश्यकता पर ध्यान केंद्रित करना था। इस प्रकार योजना का उद्देश्य इस तरह के एक विशेष प्रशिक्षण को प्रदान करना था। बाद में कलकत्ता विश्वविद्यालय बी और सी पाठ्यक्रमों की अंतिम स्कूल लीविंग परीक्षा में

⁹ उक्त।

¹⁰ उक्त/पी. 364

¹¹ पूर्वोक्त | पीपी.364-365



प्रमाण पत्र देने के लिए परीक्षा आयोजित करने के लिए आवश्यक रसद की व्यवस्था करने पर सहमत हो गया और इस तरह बंगाल सरकार ने अंततः पढ़ाई के पृथक्करण को स्वीकार कर लिया।¹²

भारत सरकार ने 28 अक्टूबर 1899 के संकल्प के माध्यम से सभी प्रांतों से उच्च विद्यालयों की उच्च कक्षाओं में अध्ययन के पृथक्करण की प्रगति के बारे में पूछताछ की। भारत सरकार को सूचित किया गया था कि केवल स्थानीय सरकारें जो कार्य करती हैं, वे उत्तर-पश्चिमी प्रांत और अवध और पंजाब थीं। अंतिम स्कूल परीक्षा थी जिसे 'लिपिक और वाणिज्यिक परीक्षा' के रूप में जाना जाता था, जिसने व्यवसाय और कार्यालयों के लिए फिटनेस का परीक्षण किया, लेकिन उत्तर पश्चिमी प्रांत और पंजाब में डिग्री के लिए अग्रणी नहीं था।¹³ मध्य प्रांतों में अध्ययन का एक वैकल्पिक पाठ्यक्रम शुरू करने के लिए कोई प्रयास नहीं किया गया था जो लड़कों को औद्योगिक और वाणिज्यिक करियर के लिए तैयार करेगा। कार्यवाहक मुख्य आयुक्त की राय थी कि शिक्षा प्रणाली में इस तरह के बदलाव लाने में समय लगेगा, लेकिन इस विचार को अच्छी तरह से लिया गया था और इसे धीरे-धीरे पेश किया जाएगा।¹⁴

भारत में इंजीनियरिंग पेशे का विकास

भारत में उन्नीसवीं सदी के अंत तक इंजीनियरिंग कॉलेज उच्च तकनीकी शिक्षा के दायरे में थे। पहले इंजीनियरिंग कॉलेज का नाम इसके संस्थापक नाम थॉमसन इंजीनियरिंग कॉलेज के नाम पर रखा गया था। इसके बाद लोक निर्माण विभाग की जरूरतों को पूरा करने के लिए अन्य प्रांतों में इंजीनियरिंग कॉलेज स्थापित किए गए। 1856 में कलकत्ता के प्रेसीडेंसी कॉलेज ने सिविल इंजीनियरिंग का एक विभाग शुरू किया, जिसे बाद में हावड़ा के शिबपुर में स्थानांतरित कर दिया गया और 1880 में इसका नाम बदलकर शिबपुर इंजीनियरिंग कॉलेज कर दिया गया। पूना में इंजीनियरिंग की कक्षाएं शुरू की गईं और बाद में यह पूना इंजीनियरिंग कॉलेज के रूप में विकसित हुई। मद्रास प्रेसीडेंसी अन्य प्रेसीडेंसी की तुलना में इंजीनियरिंग पाठ्यक्रम बहुत पहले शुरू करने का दावा कर सकती है। इसने 1794 में एक सर्वेक्षण स्कूल शुरू किया था जो बाद में 1862 में एक कॉलेज के रूप में विकसित हुआ और इसका नाम मद्रास इंजीनियरिंग कॉलेज रखा गया।

¹² ई. लिस्टर Esq. C.S., बंगाल सरकार के अवर सचिव, सामान्य: शिक्षा विभाग, भारत सरकार के सचिव को पत्र, गृह, 13 सितंबर 1900 गृह विभाग की कार्यवाही, शाखा: शिक्षा, 1902 (प्रो. नंबर 108), IOR/P/6343।

¹³ वही, पृ. 369.

¹⁴ मुख्य आयुक्त, मध्य प्रांत को एक पत्र के उद्धरण, कार्यवाहक शिक्षा निदेशक, मध्य प्रांत, 10 अप्रैल 1900 में गृह विभाग की कार्यवाही, शाखा: शिक्षा, जनवरी 1902 (प्रो. नंबर 108) पृष्ठ 381, आईओआर/पी/6343।



1857 के विद्रोह ने परिदृश्य को बदल दिया और बदली हुई स्थिति में सरकारी सेवाओं के किसी भी विभाग में भारतीयों की भर्ती को संदेह की दृष्टि से देखा जाने लगा। नतीजतन इसने उपर्युक्त इंजीनियरिंग कॉलेजों से इंजीनियरों की भर्ती को प्रभावित किया। सिविल इंजीनियरिंग का व्यावसायीकरण ब्रिटिश मध्यम वर्ग द्वारा सभी उच्च पदों को लेने के साथ हुआ और भारतीयों को काफी हद तक बाहर कर दिया।¹⁵ यह स्थिति लंबे समय तक जारी रही और केवल सदी के अंत से ही सिविल इंजीनियरिंग का भारतीयकरण शुरू हुआ।

1864 में प्रेसीडेंसी कॉलेज के साथ सिविल इंजीनियरिंग का विलय या यह कहना कि प्रतिद्वंद्विता की स्थिति से अधीनता में से एक में कमी करना एक गलती थी। यह इस समय से है कि सिविल इंजीनियरिंग कॉलेज ने गिरावट के संकेत देना शुरू कर दिया।¹⁶ बंगाल इंजीनियरिंग कॉलेज में शिक्षा के वर्षों को तीन से पांच साल तक बढ़ाना छात्रों के लिए नुकसानदेह साबित हुआ क्योंकि उन्होंने पाठ्यक्रम पूरा करने के लिए 2 साल और लगाए थे।¹⁷

फ्रांस और ब्रिटेन की स्थिति का तुलनात्मक अध्ययन करने के बाद अरुण कुमार का तर्क है कि फ्रांस में राज्य ने हमेशा इंजीनियरिंग में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है, लेकिन ब्रिटेन के मामले में हार्डवेयर, मशीनरी और कपड़ा में आविष्कारों के माध्यम से इंजीनियरिंग नीचे से अनायास उत्पन्न हुई। ब्रिटेन में पुरुषों को ज्यादातर प्रशिक्षु के रूप में प्रशिक्षित किया गया था और इस प्रकार उनमें से अधिकांश को औद्योगिक विज्ञान में स्व-सिखाया गया था और कई इंजीनियर छात्रों की पुरानी प्रणाली के उत्पाद थे।¹⁸ भारत में, जहां तक इंजीनियरिंग शिक्षा की शुरुआत का संबंध है, व्यावहारिकता अधिक महत्वपूर्ण थी क्योंकि लोक निर्माण विभाग की ब्रिटिश औपनिवेशिक आवश्यकताएं इंजीनियरिंग कॉलेजों की स्थापना का सबसे महत्वपूर्ण कारण थीं। इस संदर्भ में अरुण कुमार का तर्क है कि यह भारत को यूरोप और विदेशों में उपनिवेशों के लिए

¹⁵ डैनियल आर. हेड्रिक, *द टेंटेकल्स ऑफ प्रोग्रेस: टेक्नोलॉजी ट्रांसफर इन द एज ऑफ इंपीरियलिज्म, 1850-1894*, न्यूयॉर्क, ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस, 1988, पीपी 318-321।

¹⁶ बंगाल सचिवालय के अभिलेखों से चयनित कागजात, एफ.जे.ई. स्प्रिंग, अवर सचिव, कलकत्ता, बंगाल सचिवालय प्रेस, 1886 द्वारा संकलित।

¹⁷ वही, पृष्ठ 28.

¹⁸ अरुण कुमार, 'औपनिवेशिक आवश्यकताएं और इंजीनियरिंग शिक्षा: लोक निर्माण विभाग, 1847-1947', रे मैकलियोड और दीपक कुमार (सं.) *प्रायोगिकी और राज: भारत में पश्चिमी प्रायोगिकी और तकनीकी स्थानांतरण 1700-1947*, ऋषि प्रकाशन, नई दिल्ली, 1995, पृष्ठ 216।



कच्चे माल और खाद्यान्न के प्रमुख आपूर्तिकर्ता के रूप में परिवर्तित करने के लिए था, और भारत में ब्रिटिश निर्मित वस्तुओं के प्रवाह को सुविधाजनक बनाने के लिए था।¹⁹

ब्रिटिश सरकार ने एक और योजना भी शुरू की और इस योजना के माध्यम से सरकार परिवीक्षाधीन छात्रों को एक भारतीय कॉलेज में रखना चाहती थी। इस योजना को दो-तीन साल तक जारी रखा गया लेकिन यह असफल साबित हुई। असफलता के पीछे कारण थे। रुड़की कॉलेज के प्राचार्य ने प्रोबेशनरों को नियमित छात्रों के साथ रखने से होने वाली असुविधा को दिखाया। उनके लिए आवास खोजने में कठिनाई हो रही थी। स्थिति को देखते हुए इस योजना को दो तीन साल बाद छोड़ दिया गया। इसके बाद एक और योजना शुरू की गई जब परिवीक्षाधीन इंजीनियरों को उनके आगमन पर तुरंत काम पर तैनात कर दिया गया।²⁰ 1868 और 1869 में इंग्लैंड से बड़ी संख्या में इंजीनियरों को भेजा गया और उनमें से कई भारत में नियुक्त हो गए। भारतीय रेलवे कंपनियां, जो ज्यादातर निजी थीं की अलग-अलग मांगें थीं और इसलिए उन्होंने बड़ी संख्या में इंजीनियरों की भर्ती की। हालांकि, एक बार जब रेलवे कंपनियों में उनका कार्यकाल समाप्त हो गया, तो उन्होंने सरकारी सेवा में अपना रास्ता खोज लिया। लेकिन रेलवे कंपनियों से जारी किए गए लोगों को सरकारी सेवाओं में बनाए रखना वांछनीय नहीं था।²¹ इन सबसे ऊपर, सरकारी काम का एक बड़ा सौदा उस काम के अनुरूप नहीं था जो एक निजी कंपनी के लिए किया जाना था। एक बार जब उन्हें सरकारी सेवा में भर्ती किया गया तो उनके पद लगभग स्थायी हो गए।²² रुड़की कॉलेज ऑफ इंजीनियरिंग में प्रवेश पाने के लिए एक छात्र के पास कलकत्ता विश्वविद्यालय से मैट्रिक का प्रमाण पत्र होना आवश्यक था। यह परीक्षा इंजीनियरिंग छात्रों के लिए आयोजित की गई प्रवेश परीक्षा की तुलना में उच्च थी, जिन्हें बाद में प्रोबेशनर के रूप में भेजा जाना था (भारत में एक इंजीनियरिंग कॉलेज में या उम्मीदवार को भारत में पीडब्ल्यूडी में शामिल होने से पहले छात्र के रूप में सिविल या मैकेनिकल इंजीनियर या इंजीनियरिंग के स्कूल में) के रूप में तीन साल की पेशेवर तैयारी करनी थी। भले ही कई मामलों में वे पर्याप्त रूप से सक्षम नहीं थे, फिर भी उन्हें प्रवेश दिया गया क्योंकि समय के साथ सिविल इंजीनियरों की मांग बढ़ रही थी और उस स्थिति के बारे में बढ़ती आशंका के साथ जहां मांगों को पूरा नहीं

¹⁹ वही, पीपी.216-217 और अपराजित रामनाथ, *द बर्थ ऑफ एन इंडियन प्रोफेशन: इंजीनियर्स, इंडस्ट्री एंड द स्टेट 1900-47*, ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस, नई दिल्ली,

²⁰ पूर्वोक्त

²¹ उक्त/पृ.4

²² वही, पेज 5-6



किया गया था क्योंकि आपूर्ति पहले से ही अपर्याप्त थी। महान क्षेत्रीय विस्तार के कारण भारत में सेवा के लिए इंजीनियरों की मांग बढ़ती रही और मांग और बढ़ने वाली थी क्योंकि क्षेत्रीय विस्तार लगातार हो रहा था।²³

तकनीकी शिक्षा और औद्योगिक शिक्षा पर रिपोर्ट

1. बक रिपोर्ट 1901 - तकनीकी स्कूल और तकनीकी शिक्षा

एडवर्ड चार्ल्स बक, जो भारत सरकार के सचिव के रूप में सेवानिवृत्त हुए थे, को कर्जन द्वारा असम और बर्मा को छोड़कर प्रत्येक प्रांत में व्यावहारिक और तकनीकी शिक्षा की स्थिति और प्रगति की जांच करने के लिए नियुक्त किया गया था।²⁴ बक ने स्थिति का आकलन करने के बाद 1901 में लॉर्ड कर्जन के समय तकनीकी शिक्षा पर एक रिपोर्ट प्रस्तुत की। उनकी रिपोर्ट के अनुसार तकनीकी स्कूलों में 20 में से 19 मामलों में इसका मतलब था कि बढ़ईगीरी और लोहार का शिक्षण उन लड़कों को दिया जाता है, जिनका बढ़ई और लोहार बनने या किसी भी तरह के शारीरिक व्यवसाय में संलग्न होने का कोई इरादा नहीं था।²⁵ बक कहते हैं कि "पूरे भारत में तकनीकी शिक्षा के प्रयासों की मुख्य कमी यह थी कि विभिन्न वर्गों के छात्रों के लिए प्रदान की जाने वाली शिक्षा का पर्याप्त अंतर नहीं था, चाहे वह शिक्षा विभाग के साधारण स्कूलों में हो या तथाकथित तकनीकी स्कूलों में। वह आगे कहते हैं कि शिक्षा विभाग को उद्योगों या व्यापार से जुड़े तकनीकी निर्देश के साथ किसी भी संबंध या नियंत्रण की आवश्यकता नहीं थी। दूसरे शब्दों में, साहित्यिक, वैज्ञानिक और अनुशासनात्मक निर्देश को औद्योगिक और व्यापार निर्देश से तेज रेखा से विभाजित किया जाना चाहिए।²⁶

²³ उक्त/पृ.11

²⁴ एस.एन. सेन, *भारत में वैज्ञानिक और तकनीकी शिक्षा, 1781-1900*, भारतीय राष्ट्रीय विज्ञान अकादमी, नई दिल्ली, 1991, पृष्ठ 432

²⁵ ई.सी. बक, *व्यावहारिक और तकनीकी शिक्षा पर रिपोर्ट*, सरकारी मुद्रण अधीक्षक का कार्यालय, कलकत्ता, 1901, पृष्ठ 15

²⁶ वही, पृष्ठ 16



तालिका :1.1 ई सी बक द्वारा भारत में प्राथमिक और तकनीकी स्कूलों का वर्गीकरण

स्कूल की कक्षा	प्रांत जिनमें पाया गया
<p>1. जिसमें व्यावहारिक तरीकों से कोई शिक्षण नहीं दिया जाता था, जैसे कि किंडरगार्टन, वस्तु पाठ, चित्र आदि।</p> <p>2. जिसमें वस्तु पाठ और प्राथमिक विज्ञान वैकल्पिक विषय थे।</p> <p>3. जिसमें व्यावहारिक तरीकों का प्रयोग किया जाता है।</p> <p>4. जिसमें हाथ और आंख और मैनुअल प्रशिक्षण को 3 में जोड़ा गया था।</p>	<p>1. उत्तर-पश्चिम प्रांत</p> <p>2.. मद्रास</p> <p>3. कमोबेश हर प्रांत। शायद अन्य जगहों की तुलना में बॉम्बे और मध्य प्रांतों में अधिक</p> <p>4. मध्य प्रांत शहर के स्कूल, उत्तर-पश्चिमी प्रांत अंग्रेजी स्कूल, बंगाल स्थानीय भाषा के स्कूल।</p> <p>5. बॉम्बे में औद्योगिक स्कूल।</p> <p>6. सहायता प्राप्त स्कूल, मुख्य रूप से मिशन, बॉम्बे, मद्रास, उत्तर-पश्चिमी प्रांतों और मध्य प्रांतों में।</p> <p>7. बंगाल में रेशम उत्पादन स्कूल, मद्रास में एल्युमिनियम स्कूल, बंगाल, मद्रास, बॉम्बे और पंजाब में आर्ट स्कूल, रुडकी कॉलेज औद्योगिक कक्षा।</p> <p>8. लाहौर</p> <p>9. विक्टोरिया जुबली इंस्टीट्यूट, बॉम्बे।</p> <p>10. लखनऊ में पेश किया जाना है, सभी शहरों के लिए अनुशंसित किया गया है।</p>
<p>तकनीकी</p> <p>5. 'अनुशासनात्मक' प्रणाली पर मैनुअल वर्क स्कूल, जो मैनुअल व्यवसायों के लिए मैनुअल अभ्यास द्वारा लड़कों को तैयार करता था।</p> <p>6. स्कूल जो साहित्यिक निर्देश देते थे, स्कूल के अधिकारियों के तहत एक व्यापार पढ़ाने के साथ।</p> <p>7. विशेष ट्रेड स्कूल किसी उद्योग में सुधार पढ़ाने या स्कूल के अधिकारियों के तहत एक नए उद्योग को पढ़ाने के लिए साहित्यिक निर्देश नहीं दे रहे हैं।</p> <p>8. फाउंड्री, कार्यशालाओं आदि में कारीगरों को प्रशिक्षित करने के लिए विशेष</p>	



स्कूल। 9. उच्च श्रेणी के कर्मचारियों के लिए विशेष स्कूल। 10. नेपल्स प्रणाली पर देशी कारीगरों के शिक्षकों के तहत शिक्षण उद्योगों के लिए विशेष व्यापार स्कूल।	
---	--

स्रोत: ईसी बक, व्यावहारिक और तकनीकी शिक्षा पर रिपोर्ट, सरकारी मुद्रण अधीक्षक का कार्यालय, कलकत्ता, भारत, 1901, पृष्ठ 181

बक द्वारा दिए गए तकनीकी स्कूलों के उपरोक्त विवरण ने कई पहलुओं को स्पष्ट कर दिया। जैसे टाइप 5 केवल बॉम्बे प्रेसीडेंसी में मौजूद था, जहां 1900 तक उनमें से 12 थे। इस योजना ने लड़कों से साहित्यिक स्कूलों से एक दिए गए मानक को पारित करने का प्रमाण पत्र लाने की मांग की और फिर तीन साल के पाठ्यक्रम निर्देश में भाग लेने के लिए 1) ड्राइंग में, जो काफी उच्च कलात्मक स्तर तक पहुंच गया, 2) बढईगीरी और लोहे के काम में 'मैनुअल व्यायाम' की एक स्नातक श्रृंखला में जो अंत में कुछ हद तक विस्तृत चरित्र के थे, और 3) एक कार्यशाला में उपकरणों के व्यावहारिक उपयोग में। इसका मतलब सामान्य शैक्षिक पाठ्यक्रम से एक ब्रेक था, इस तथ्य को ध्यान में रखते हुए कि 13 या 14 साल की उम्र में लड़कों को रोजगार के लिए पर्याप्त उम्र तक अपनी सामान्य शिक्षा जारी रखनी चाहिए या करनी चाहिए, जब तक कि उन्होंने एक बार में नहीं अपनाया, जो उन्होंने नहीं किया प्रशिक्षु के रूप में एक मैनुअल व्यापार।²⁷

बक द्वारा उपर्युक्त सूची में से टाइप 6 भारत में सबसे पसंदीदा प्रकार का औद्योगिक स्कूल था। इस प्रकार के स्कूलों की स्थापना मिशनरियों द्वारा की गई थी, लेकिन बाद में सरकार द्वारा स्थापित अधिकांश औद्योगिक स्कूलों में कमोबेश इसकी नकल की गई। इन स्कूलों में साहित्यिक शिक्षा का एक अच्छा सौदा एक ही समय में प्रदान किया गया था, जिनमें से सबसे प्रमुख बढईगीरी और लोहार का काम था सिखाया जाता था। इस प्रकार के स्कूलों की सबसे बड़ी संख्या मद्रास में पाई गई, जहां किसी भी अन्य प्रांत की तुलना में कई अधिक मिशनरी थे।²⁸

²⁷ ईसी बक, व्यावहारिक और तकनीकी शिक्षा पर रिपोर्ट, *op.cit.* p.19

²⁸ उक्त/पी. 20



आर्ट स्कूलों ने मुख्य रूप से ड्राइंग-मास्टर्स और ड्राफ्ट्समैन के उत्पादन के लिए ड्राइंग प्रदान की। दूसरे कई व्यापार जो शहरों में प्रचलित थे जैसे मुद्रण, फोटोग्राफी, वास्तुकला, लिथोग्राफी, डिजाइनिंग, पेंटिंग और मूर्तियां, लकड़ी की नक्काशी। उपरोक्त सूचीबद्ध कला और व्यापार के अलावा मिट्टी के बर्तन, कालीन बनाने, सभी प्रकार के कला उद्योग, रखरखाव, पुनर्स्थापना और यहां तक कि प्राच्य कला में सुधार भी सिखाया गया था। हालांकि इस नियम का उल्लंघन कि व्यापार के इलाके में ट्रेडों को पढाया जाना चाहिए, इसकी विफलता के साथ लाया गया। क्योंकि छात्र आगे नहीं बढ़ते थे और आगे बढ़ने का इरादा भी नहीं रखते थे, जिस व्यापार में उन्होंने महारत हासिल करने के लिए प्रयास किए थे, आंशिक रूप से क्योंकि उनके पास पड़ोस में इसे आगे बढ़ाने के लिए पूंजी या सुविधाएं नहीं थीं और आंशिक रूप से इसलिए कि उन्हें सही वर्ग से नहीं चुना गया था। इस प्रकार, कला विद्यालयों का मुख्य उद्देश्य, जो ओरिएंटल कला उद्योगों को संरक्षित करना, बहाल करना और यहां तक कि सुधार लाना था, को कुचल दिया गया था। जबकि टाइप 8 फाउंड्री, कार्यशालाओं, कारखानों में रोजगार के लिए कारीगरों को प्रशिक्षित करने के लिए विशेष स्कूल थे। इस प्रकार के स्कूल केवल 1900 के आसपास लाहौर में स्थापित किए गए थे। लेकिन इस प्रकार के स्कूलों को भी टाइप 6 के समान भाग्य का सामना करना पड़ा और लंबे समय में सफल नहीं हुए।²⁹

भारत में सरकारी इंजीनियरिंग और मेडिकल कॉलेजों में उच्च श्रेणी का तकनीकी प्रशिक्षण दिया जाता था, यह बॉम्बे में विक्टोरिया जुबली तकनीकी संस्थान में भी दिया जाता था। विक्टोरिया जुबली तकनीकी संस्थान में मैकेनिकल इंजीनियरिंग, कपास, निर्माण, शीट मेटल वर्किंग और तामचीनी में पुराने छात्रों को विशेष निर्देश प्रदान किया गया था। यहां विशेष शिक्षा प्राप्त करने वाले छात्र ज्यादातर बॉम्बे की सूती मिलों की तरह अच्छी तनख्वाह वाला रोजगार प्राप्त करने में सफल रहे। टाइप 10 स्कूल ज्यादातर नेपल्स प्रणाली पर आधारित औद्योगिक स्कूल थे। इस प्रकार के स्कूलों की मुख्य विशेषता तकनीकी प्रशिक्षण से शिक्षा को अलग करना और सरकारी अधिकारियों द्वारा नहीं बल्कि पढाए गए मास्टर-कारिगरों द्वारा आयोजित कार्यशालाओं में लड़कों की शिक्षता को अलग करना था। यहां यह उल्लेख किया जाना चाहिए कि एक शैक्षिक अधिकारी को साहित्यिक शिक्षा की अध्यक्षता करनी चाहिए और एक तकनीकी अधिकारी को व्यापार शिक्षा का ध्यान रखना चाहिए। आम तौर पर यह देखा गया कि जहां एक शैक्षिक अधिकारी साहित्यिक और तकनीकी शिक्षा दोनों के पाठ देता था, वहां साहित्यिक पक्ष पर अधिक ध्यान दिया जाता था। इन कलाओं में समग्र विकास के

²⁹ ई. सी. बक, व्यावहारिक और तकनीकी शिक्षा पर रिपोर्ट, *op.cit*, pp.21-22



लिए इसकी जाँच और सुधार करने की आवश्यकता है। बक ने इस संबंध में महत्वपूर्ण सुझाव दिए, मैनुअल अभ्यास को सामान्य शिक्षा का एक महत्वपूर्ण हिस्सा बनाना चाहिए।³⁰

1. क्लिबोर्न रिपोर्ट –

औद्योगिक स्कूलों ने कई तरह से तकनीकी शिक्षा प्रदान करने में मदद की। तकनीकी शिक्षा की समीक्षा करते हुए भारत सरकार ने पाया कि सामान्य और तकनीकी अध्ययन के बीच कोई स्पष्ट अंतर नहीं था। उपरोक्त परिदृश्य को देखते हुए लॉर्ड कर्जन ने 1901 में देश के मौजूदा औद्योगिक स्कूलों की जांच के लिए जे. क्लिबोर्न को नियुक्त किया। औद्योगिक स्कूलों की समीक्षा करने के बाद आयोग ने वकालत की कि औद्योगिक स्कूलों में दो प्रणालियों में से एक पर या दोनों के संयोजन से निर्देश दिए जा सकते हैं। इन्हें वर्ग-प्रणाली और प्रशिक्षु प्रणाली कहा जाता था। कुछ मामलों में छात्रों को अभ्यास के पाठ्यक्रम की समाप्ति के बाद लेख बनाने के लिए कहा गया था, प्रत्येक छात्र कठिन और साथ ही आसान भागों पर एक पूरा लेख बना रहा था। लेख का चुनाव उसके कौशल के स्तर से निर्धारित होता था, न कि बाजार में मांग से। शिक्षक काफी संख्या में छात्रों को निर्देशित और पर्यवेक्षण करने में सक्षम था और उसे एक निश्चित वेतन मिलता था। छात्रों को निश्चित मासिक वजीफा और मुफ्त साहित्यिक प्रशिक्षण प्राप्त करने या स्कूल के धन से भुगतान किए जाने की संभावना से कक्षा में भाग लेने के लिए राजी किया गया था। स्कूल ने सामग्री और उपकरणों की आपूर्ति की और बदले में वस्तुओं की बिक्री से अर्जित लाभ प्राप्त किया।

दूसरा प्रसार की प्रशिक्षु-प्रणाली थी जिसे व्यापार कार्यशालाओं में प्राप्त किया जा सकता था। कुशल श्रमिक या शिल्पकार ने विभिन्न कार्यों को अंजाम दिया, उन्हें प्रशिक्षुओं द्वारा मदद की गई, जिनके पास विभिन्न स्तरों के कौशल थे, साथ ही उन्हें शिल्प सीखने में भी मदद मिली। किए गए कार्य की प्रकृति को तय करने में बाजार ने बहुत महत्वपूर्ण भूमिका निभाई। शिल्पकार ने अपने काम से जीविकोपार्जन किया और औजारों और सामग्रियों के लिए भुगतान किया। प्रशिक्षुओं को शिल्पकार की सहायता करने के बदले में वेतन मिलता था और यह उनके कौशल के स्तर के साथ भिन्न होता था। व्यापार कार्यशालाओं का उद्देश्य लाभ कमाना था।³¹ रिपोर्ट की मुख्य सिफारिशें यह थीं कि भारत में औद्योगिक शिक्षा की व्यवस्था नेपल्स में कैसानोवा बॉय आर्टिसन स्कूल के मॉडल पर की जानी चाहिए। इस प्रकार देशी छात्रों का चरित्र निर्माण तकनीकी शिक्षा का

³⁰ पूर्वोक्त पृ.24

³¹ जे. क्लिबोर्न, औद्योगिक शिक्षा की रिपोर्ट, सरकार के अधीक्षक का कार्यालय, कलकत्ता, भारत, 1903, भाग I, पीपी.1-2



एक साथ उपक्रम था जैसा कि औपनिवेशिक स्वामी द्वारा माना जाता था। स्कूल की कैसानोवा प्रणाली एक दिन का स्कूल थी और रविवार और छुट्टियों पर भी पूरे वर्ष लंबे समय तक उपस्थिति लागू की जाती थी ताकि उन्हें स्कूल में लंबे समय तक रहने के लिए बनाया जा सके ताकि वे घर के बुरे प्रभाव से बच सकें। पाठ्यक्रम पूरा करने के बाद उन्हें व्यापार कार्यशालाओं में कुछ घंटे बिताने थे। एक बार जब उन्होंने पाठ्यक्रम पूरा कर लिया और स्कूल छोड़ दिया, तो वे कारीगरों के रूप में अच्छी तरह से भुगतान करने वाले काम प्राप्त करने में सक्षम थे। अनुमान के अनुसार प्रत्येक लड़के के शिक्षण की लागत 80 रुपये प्रति वर्ष बताई गई थी। सरकार मूल आबादी पर इतना खर्च नहीं करना चाहती थी, इसलिए समिति ने औद्योगिक स्कूलों को समाप्त करने और उन्हें कार्यशालाओं के पर्यवेक्षण की प्रणाली के लिए प्रतिस्थापित करने का सुझाव दिया।³²

इस प्रकार सिद्धांतों के दो पूरी तरह से अलग सेटों की वकालत की गई थी, लेकिन उनमें से किसी को भी ठीक से लागू करने और अभ्यास की कसौटी पर खरा उतरने के लिए कुछ भी नहीं किया गया था। व्यावहारिक उद्देश्यों के लिए उन संस्थानों के बीच अंतर करना महत्वपूर्ण था जो बॉम्बे, कानपुर, हावड़ा जैसे महान औद्योगिक केंद्रों में उपयुक्त होंगे, जहां बड़े पैमाने पर उद्योगों में पूंजी का उपयोग किया जाता था और उन शहरों के लिए उपयुक्त होते हैं जिनमें स्थानीय उद्योग छोटे निजी कारखानों और कार्यशालाओं में हस्तशिल्प के रूप में अभ्यास करते हैं।³³

उच्च शिक्षा के लिए कर्जन की योजना

अंग्रेजों के राजनीतिक उद्देश्यों को निम्नलिखित उद्धरण के माध्यम से समझा जा सकता है, "मूल निवासियों को या तो शक्ति की भावना से नीचे रखा जाना चाहिए या उन्हें स्वेच्छा से एक दृढ़ विश्वास से प्रस्तुत करना चाहिए कि हम किसी भी अन्य शासक की तुलना में अधिक बुद्धिमान, अधिक न्यायपूर्ण, अधिक मानवीय और उनकी स्थिति में सुधार करने के लिए अधिक उत्सुक हैं।"³⁴ जब कोई भारत में कर्जन के समय के बारे में बात करता है तो यह बात हमेशा ध्यान में रखी जानी चाहिए कि अंग्रेज उपनिवेशवादी थे और इस तरह की अनिवार्यता हमेशा अंग्रेजी शिक्षा प्रदान करने की लाभकारी गतिविधियों के तहत काम करती थी। जब तक

³² पूर्वोक्त | भाग II, पृष्ठ 2-3।

³³ वही, भाग II, पृष्ठ 5

³⁴जे . फरीश बॉम्बे प्रेसीडेंसी में जारी एक मिनट में, गौरी विश्वनाथन, मास्क ऑफ कॉन्क्वेस्ट: लिटरेरी स्टडी एंड ब्रिटिश रूल इन इंडिया, कोलंबिया यूनिवर्सिटी प्रेस, कोलंबिया, 1989, पृष्ठ 6 में उद्धृत



कर्जन भारत आए, औपनिवेशिक सरकार ने अपने शासन को मजबूत कर लिया था और इसलिए औपनिवेशिक अभिविन्यास के रूपों में कुछ बदलाव हुए थे, लेकिन मूल अनिवार्यता कमोबेश वही रही। यह भारत की मूल आबादी को एक निश्चित स्तर तक शिक्षित करने के लिए था। जहां तक भारत में शिक्षा का सवाल है, कर्जन की बहुत बड़ी भूमिका थी क्योंकि उन्होंने कई बदलाव किए। इन सभी परिवर्तनों में दो परिवर्तन सबसे महत्वपूर्ण थे- 1902 का विश्वविद्यालय सुधार अधिनियम और तकनीकी और औद्योगिक अनुसंधान को दिया गया निर्देश। 1902 के शिमला शिक्षा सम्मेलन में कर्जन ने तकनीकी शिक्षा और औद्योगिक अनुसंधान दोनों को स्पष्ट रूप से परिभाषित किया।

"तकनीकी शिक्षा वाक्यांश इस देश में कई दृश्यों में नियोजित है, जैसा कि यूरोप में है। दुनिया के दोनों हिस्सों में, इसका उपयोग करने वालों में से कई को इस बात का कोई स्पष्ट विचार नहीं है कि यह क्या दर्शाता है। सामान्य भ्रम इतना बड़ा था कि ग्रेट ब्रिटेन के तत्कालीन प्रधान मंत्री ने भी घोषणा की कि वह वाक्यांश का अर्थ खोजने में असमर्थ थे।³⁵

कर्जन ने बहुत स्पष्ट कर दिया कि मूल आबादी के लिए तकनीकी शिक्षा से उनका क्या मतलब है:-

"मेरा मतलब है कि व्यावहारिक निर्देश जो एक युवा या एक आदमी को कुछ हस्तशिल्प, या उद्योग, या पेशे के अभ्यास के लिए योग्य बनाएगा। मैं वाक्यांश में शैक्षिक गतिविधि के अधिक उन्नत रूप को शामिल नहीं करता हूं जिसे वैज्ञानिक अनुसंधान के रूप में जाना जाता है, और जिसमें वैज्ञानिक प्रयोग के लिए सबसे उच्च प्रशिक्षित संकायों का अनुप्रयोग शामिल है।³⁶

लॉर्ड कर्जन के नेतृत्व में सरकार ने 1905 में एक अलग शाही विभाग के रूप में वाणिज्य और उद्योग विभाग की स्थापना की। वित्त और वाणिज्य के तहत आने वाले विभिन्न विभागों को गृह, लोक निर्माण और राजस्व और कृषि जैसे वाणिज्य विभाग के तहत लाया गया।

राष्ट्रवादी आकांक्षा और प्रतिक्रिया

कर्जन को भारत की मूल आबादी के लिए तकनीकी शिक्षा के उच्च रूपों से संबंधित ज्ञान का विस्तार करने में कोई दिलचस्पी नहीं थी। 1896 में, जमसेदजी टाटा ने एक शोध संस्थान स्थापित करने का विचार रखा और इस उद्देश्य के लिए उन्होंने बॉम्बे में कुछ भू-संपत्ति दी। एक प्रस्ताव तैयार किया गया और कर्जन को प्रस्तुत

³⁵ 2 सितंबर 1901 को शैक्षिक सम्मेलन में दिए गए महामहिम वायसराय का भाषण, पृ.10, भारत सरकार, गृह विभाग, शाखा: शिक्षा, कार्यवाही, अक्टूबर 1901, संख्या 19, (गोपनीय), शिमला रिकॉर्ड्स 5.

³⁶ उक्त/



किया गया लेकिन उन्होंने दिलचस्पी नहीं ली और महसूस किया कि एक शोध विश्वविद्यालय के लिए टाटा का प्रस्ताव समय से पहले था क्योंकि भारतीय उच्च तकनीकी शिक्षा के लिए तैयार नहीं थे। कर्जन ने राज्य सचिव को लिखा:

"भारत में न तो काम के लिए छात्र हैं और न ही उनकी पढ़ाई पूरी करने के बाद उनके लिए जगह और मुझे खुद को बिल्कुल भी आश्रय नहीं होगा, हालांकि मुझे बहुत पछतावा होना चाहिए, अगर अगले दस या पंद्रह वर्षों के समय में महंगा प्रयोग निराशाजनक रूप से विफल हो जाएगा।³⁷

अंग्रेजी शिक्षा के अपरिहार्य परिणामों में से एक सरकारी सेवा, कानून, शिक्षा और व्यापारिक फर्मों में सफेदपोश नौकरियों के लिए उपयुक्त स्नातकों की बढ़ती संख्या थी और इसके परिणामस्वरूप शिक्षित बेरोजगारी की समस्या सदी के अंत तक एक प्रमुख मुद्दा बनती जा रही थी। कर्जन और ब्रिटिश सरकार इस 'बौद्धिक सर्वहारा' के विकास के संभावित राजनीतिक प्रभावों के बारे में चिंतित थे।³⁸

राष्ट्रवादियों ने एक विकल्प सामने रखा - तकनीकी और वैज्ञानिक शिक्षा पर जोर देने के माध्यम से विविधीकरण की एक प्रणाली। इसके साथ ही भारत में औद्योगिक विस्तार को बढ़ावा देने की एक समानांतर योजना बौद्धिक सर्वहारा वर्ग के दिमाग के पीछे चल रही थी। कांग्रेस ने तकनीकी शिक्षा से संबंधित विचारों को बढ़ावा देने की भी कोशिश की क्योंकि यह भारतीय लोगों को रोजगार प्रदान कर सकता है।³⁹ बिदिशा धर आगे कहती हैं, "औपनिवेशिक राज्य की तरह राष्ट्रवादी उत्पादन प्रक्रिया को आधुनिक बनाना चाहते थे, लेकिन बाद के विपरीत वे नहीं चाहते थे कि कारीगरों को फोरमैन और मैकेनिक में बदल दिया जाए। औपनिवेशिक सरकार का इरादा औद्योगिक स्कूलों की मदद से कारीगरों के उत्पादों के बाजार मूल्य को बढ़ाना था।⁴⁰ 1905 में बंगाल के विभाजन ने पूरे परिदृश्य को बदल दिया। शिक्षित बंगालियों ने बहिष्कार, स्वदेशी और राष्ट्रीय शिक्षा के राजनीतिक आंदोलन का फैसला किया। स्वदेशी औद्योगीकरण के लिए राष्ट्रीय शिक्षा की वकालत

³⁷ अपर्णा बसु, *भारतीय शिक्षा के इतिहास में निबंध*, अवधारणा प्रकाशन कंपनी, नई दिल्ली, 1982, पृष्ठ 43

³⁸ इस वाक्यांश का इस्तेमाल बंगाल जिला प्रशासन समिति की रिपोर्ट में किया गया था, जिसका हवाला सुमित सरकार, *द स्वदेशी मूवमेंट इन बंगाल 1903-1908*, पीपुल्स पब्लिशिंग हाउस, नई दिल्ली, 1973, पृ. 150 में दिया गया है।

³⁹ बिदिशा धर, 'टेक्निकल एजुकेशन डिस्कॉर्स इन इंडिया: स्टेट एंड द आर्टिजर्स, 1880-1914', *स्टडीज इन हिस्ट्री*, वॉल्यूम 33 (2), 2017, पी. 217।

⁴⁰ वही, पृष्ठ 221



की। 1900 के दशक की शुरुआत में तकनीकी शिक्षा में प्रारंभिक परिवर्तन आए और यह केवल प्रथम विश्व युद्ध के आसपास ही तेज होगा।

भारत में तकनीकी शिक्षा का विकास औद्योगिक विकास पर निर्भर करता है। उन्नीसवीं शताब्दी के उत्तरार्ध से भारत में आधुनिक उद्योगों का विकास हुआ। हालांकि, विकास का स्तर उत्पादन और रोजगार दोनों के मामले में यूरोपीय देशों की तुलना में कम था। उन्नीसवीं शताब्दी में विकास का क्षेत्र मुख्य रूप से कपास, जूट और चाय तक ही सीमित था। प्रथम विश्व युद्ध के दौरान स्थिति बदल गई। भारतीय कपास की मांग कई गुना बढ़ गई क्योंकि मैनेचेस्टर मिलें सेना की युद्ध की मांग को पूरा करने में व्यस्त थीं। उस समय भारतीय मिलों का एक विशाल घरेलू बाजार था, लेकिन बुनियादी उद्योगों जैसे भारी रसायन, मशीन टूल्स, धातु विज्ञान आदि के क्षेत्र में। यूरोपीय कारोबारियों के वर्चस्व के कारण भारत पिछड़ गया। यूरोपीय लोग चाय, कॉफी, खनन, नील और जूट की खेती में निवेश करने में रुचि रखते थे। भारतीय अर्थव्यवस्था को ब्रिटिश आवश्यकताओं और ब्याज के अनुसार ढाला गया था। वे भारत को निर्मित वस्तुओं के आयात की मशीन बनाना चाहते थे। भारत में रेलवे के पीछे मुख्य कारण ब्रिटेन के नव विकसित लौह और इस्पात और इंजीनियरिंग उद्योगों के लिए भारत में एक बाजार बनाना था। रेलवे को मैकेनिकल इंजीनियरों के लिए सबसे अच्छा प्रशिक्षण मैदान माना जाता था।

अंग्रेजों ने भारत में तकनीकी प्रशिक्षण के सेंटर की स्थापना की। सार्वजनिक भवनों, सड़कों, नहरों और बंदरगाहों के निर्माण के लिए ओवरसियरों का प्रशिक्षण आवश्यक हो गया। सेना, नौसेना और सर्वेक्षण विभाग के लिए आवश्यक उपकरणों और उपकरणों के उपयोग के लिए कारीगरों और शिल्पकारों का प्रशिक्षण भी आवश्यक था। आयुध कारखानों और अन्य इंजीनियरिंग प्रतिष्ठानों के पास स्कूल स्थापित किए गए थे। भारत में इंजीनियरिंग शिक्षा की उत्पत्ति और विकास लोक निर्माण विभाग से प्रेरित था। सिविल इंजीनियरिंग को इंजीनियरिंग की अन्य शाखाओं की कीमत पर विकसित किया गया था। लोक निर्माण विभाग की नियुक्ति की नीति भेदभावपूर्ण थी। कम नौकरियां भारतीयों के लिए थीं और वरिष्ठ इंजीनियर ब्रिटेन से आए थे।

20वीं सदी की शुरुआत में तकनीकी शिक्षा में औद्योगीकरण, तकनीकी प्रगति और उभरती सामाजिक जरूरतों से प्रेरित दुनिया भर में महत्वपूर्ण परिवर्तन हुआ। इस अवधि के दौरान दुनिया भर में बढ़ती औद्योगिक अर्थव्यवस्था के जवाब में तकनीकी शिक्षा का तेजी से विस्तार हुआ और भारत ने भी इस क्षेत्र में कुछ विकास देखा। इस समय के दौरान विनिर्माण, इंजीनियरिंग और कुशल ट्रेडों में औद्योगिक नौकरियों के लिए श्रमिकों को प्रशिक्षित करने के लिए व्यावसायिक स्कूल और तकनीकी संस्थान स्थापित किए गए थे। टाटा के



व्यक्तिगत प्रयासों के कारण तकनीकी शिक्षा ने भी रास्ते बनाए। स्नातकोत्तर प्रशिक्षण और अनुसंधान के लिए भारतीय विज्ञान संस्थान की स्थापना 1909 में बेंगलूर में की गई थी। बंगाल में स्वदेशी आंदोलन के नेताओं ने 1906 में राष्ट्रीय शिक्षा परिषद का आयोजन किया। जादवपुर में कॉलेज ऑफ इंजीनियरिंग एंड टेक्नोलॉजी ने 1908 में मैकेनिकल इंजीनियरिंग और 1921 में केमिकल इंजीनियरिंग में डिप्लोमा देना शुरू किया।

हॉलैंड आयोग 1916

थॉमस हॉलैंड की अध्यक्षता में भारत सरकार ने 1916 में एक आयोग का गठन किया। आयोग के भारतीय सदस्य श्री जेडी टाटा, पंडित मदन मोहन मालवीय और आरएन मुखर्जी थे। आयोग ने निम्नलिखित पहलुओं पर ध्यान केंद्रित किया।

अ) वाणिज्य और उद्योग में पेशेवर रोजगार के लिए नए अवसर

आ) औद्योगिक विकास को प्रोत्साहन

इ) इस दृष्टिकोण के साथ बारीकी से तकनीकी संस्थानों का अध्ययन करना कि वे जनशक्ति के नियोक्ता थे और भारत और विदेशों में सुविधाओं को बढ़ावा देने के लिए अनुसंधान गतिविधियों और उद्योगों के बीच संबंधों पर विचार करना।

आयोग ने अपनी रिपोर्ट में भारत में तकनीकी शिक्षा से संबंधित विभिन्न बिंदुओं का उल्लेख किया है। सदस्य मौजूदा परिदृश्य से संतुष्ट नहीं थे और इसलिए उन्होंने कुछ बदलावों का सुझाव दिया। आयोग ने वैज्ञानिक और तकनीकी सेवाओं के निर्माण का सुझाव दिया और उद्योगों को तकनीकी और वित्तीय सहायता प्रदान करने का सुझाव दिया। आयोग ने मैकेनिकल इंजीनियरों के प्रशिक्षण के लिए सिफारिश की कि:

अ) मैकेनिकल इंजीनियरों को प्रशिक्षित करने का आदर्श तरीका कार्यशाला अभ्यास और तकनीकी निर्देश को यथासंभव बारीकी से जोड़ना था। उन्हें कार्यशाला में प्रशिक्षित किया जाना चाहिए साथ ही तकनीकी स्कूलों में पूरक कक्षा निर्देश प्राप्त करना चाहिए।

आ) तकनीकी स्कूलों में निर्देश फोरमैन के लिए प्रदान किए जाने वाले निर्देशों की तुलना में अधिक उन्नत प्रकृति के होने चाहिए।

इ) तकनीकी कक्षाओं में बिताया गया समय दुकान के कुल काम के घंटों के एक तिहाई के बराबर होना चाहिए।



- ई) आगे अप्रेंटिसशिप पूरी होने के बाद इच्छुक छात्रों को उन्नत प्रशिक्षण प्रदान किया जाना चाहिए। कॉलेज को उन्नत छात्रों के लिए सुलभ बनाया जाना चाहिए जो पूर्ण विश्वविद्यालय डिग्री कार्यक्रम के बजाय विशेष कार्यक्रम लेना चाहते हैं।
- उ) मैकेनिकल इंजीनियरिंग और इलेक्ट्रिकल इंजीनियरिंग के छात्रों में उच्च तकनीकी निर्देश प्रदान करने के लिए इंजीनियरिंग कॉलेजों का तकनीकी संस्थानों में विस्तार।
- ऊ) कॉलेजों के आंतरिक प्रशासन को बोर्ड या परिषद द्वारा नियंत्रित किया जाना चाहिए।
- ऋ) शाही कॉलेजों की स्थापना
- ल) कोयला क्षेत्र पर स्व-निहित खनन स्कूल ताकि छात्र किसी भी खदान में अपने पाठ्यक्रम का व्यावहारिक हिस्सा ले सकें।
- ऐं) टिस्को के कार्यों के सहयोग से उस पड़ोस में विकसित होने वाले धातुकर्म उद्योगों के लिए साकची में एक तकनीकी स्कूल शुरू करना।
- ऐ) भारतीय, यूरोपीय और एंग्लो-इंडियन को समान वजीफा दिया जाना चाहिए। सभी प्रकार के प्रशिक्षुओं को उनके काम के घंटे, दक्षता और उनके खर्च के अनुसार मासिक राशि दी जानी चाहिए।

आयोग की इन सभी सिफारिशों में से कुछ को लागू किया गया।

इस संदर्भ में निगेल क्रुक ने कहा है कि "भारत में ब्रिटिश राजनीतिक शक्ति का विस्तार ज्ञान के नियंत्रण, संचरण, उत्पादन और पुनरुत्पादन के साथ था।"⁴¹

हार्टोग समिति, 1929

साइमन कमीशन की स्थापना शिक्षा की स्थिति की जांच और रिपोर्ट प्रदान करने के लिए की गई थी। इस उद्देश्य को पूरा करने के लिए फिलिप हार्टोग के अध्यक्ष के रूप में कार्य करते हुए एक पूरक समिति का गठन किया गया था। उन्होंने हाल ही में स्थापित ढाका विश्वविद्यालय में कुलपति का पद संभाला था और कलकत्ता विश्वविद्यालय के पूर्व सदस्य थे। हार्टोग समिति ने निम्न माध्यमिक स्तर के छात्रों के लिए एक विविध पाठ्यक्रम का प्रस्ताव रखा। इसके अतिरिक्त उन्होंने सुझाव दिया कि छात्रों के एक हिस्से को इस चरण के अंत में तकनीकी और वाणिज्यिक पाठ्यक्रमों की ओर निर्देशित किया जाए, साथ ही माध्यमिक स्तर में विविध शिक्षा विकल्पों की वकालत भी की जाए। समिति ने हाई स्कूलों में औद्योगिक और वाणिज्यिक पाठ्यक्रमों के

⁴¹ निगेल क्रुक, ज्ञान का नियंत्रण और विस्तार: एक परिचय



लिए भी सिफारिश की। सरकार ने हार्टोग समिति की रिपोर्ट को स्वीकार कर लिया और इसे 1937 तक अपने शैक्षिक प्रयासों के लिए एक मार्गदर्शक ढांचे के रूप में उपयोग किया।

सपू समिति, 1934

सपू समिति का गठन सामान्य शिक्षा और व्यावसायिक और तकनीकी शिक्षा के बीच संबंध की जांच करने के लिए किया गया था। इसमें प्रस्ताव दिया गया था कि निम्न माध्यमिक शिक्षा पूरी करने के बाद व्यावसायिक प्रशिक्षण प्रदान किया जाए। 1935 में, केंद्रीय शिक्षा सलाहकार बोर्ड ने सुझाव दिया कि माध्यमिक शिक्षा पूरी करने के बाद, व्यक्तियों के लिए उच्च शैक्षणिक शिक्षा, कृषि शिक्षा, तकनीकी शिक्षा और अन्य संबंधित क्षेत्रों को आगे बढ़ाने के लिए कई अवसर उपलब्ध होने चाहिए। समिति ने इंटरमीडिएट फेज को खत्म करने की भी सलाह दी। स्कूली शिक्षा की आदर्श अवधि ग्यारह वर्ष होनी चाहिए, जिसमें प्राथमिक शिक्षा के लिए पांच वर्ष और माध्यमिक शिक्षा के लिए छह वर्ष शामिल हैं। माध्यमिक कक्षाओं को आगे निम्न माध्यमिक और उच्च माध्यमिक में वर्गीकृत किया गया था।

द एबॉट-वुड रिपोर्ट, 1937

इस अवधि के दौरान व्यावसायिक और तकनीकी कौशल का प्रश्न व्यावहारिक महत्व का विषय बन गया। इस अवधि के दौरान ब्रिटिश सरकार ने तकनीकी और व्यावसायिक शिक्षा के मुद्दों को प्राथमिकता दी और इसलिए सरकार ने ए. एबॉट के नेतृत्व में एक समिति का गठन किया, जो इंग्लैंड में शिक्षा बोर्ड में खुफिया निदेशक के रूप में कार्यरत थे। समिति ने 1937 में दो भागों में अपनी रिपोर्ट प्रस्तुत की। तकनीकी और व्यावसायिक शिक्षा के संबंध में समिति की सिफारिशें इस प्रकार थीं:

- अ) औद्योगिक आवश्यकताओं के जवाब में तकनीकी शिक्षा का विस्तार
- आ) शिक्षा को अपने प्रकार और संरचना के संदर्भ में व्यापार, उद्योग और वाणिज्य के साथ संरेखित किया जाना चाहिए
- इ) तकनीकी, व्यावसायिक और सामान्य शिक्षा को अलग-अलग प्रभागों के रूप में नहीं माना जाना चाहिए, बल्कि चल रही प्रगति के पूर्ववर्ती और बाद के चरणों के रूप में माना जाना चाहिए।
- ई) कॉलेजों और संस्थानों में शामिल व्यक्तियों को भी प्रशिक्षण मिलना चाहिए
- उ) दो प्रकार के ट्रेड स्कूल स्थापित किए जाएं:
 1. एक जूनियर स्कूल जो आठ कक्षा के बाद छात्रों को पंजीकृत करेगा और तीन साल के पाठ्यक्रम प्रदान करेगा



2. और एक वरिष्ठ स्कूल जो छात्रों को दो साल के पाठ्यक्रम की पेशकश करने के लिए मैट्रिक पूरा करने के बाद प्रवेश देगा
 - ऊ) विशेष रूप से सेवाकालीन प्रशिक्षण के लिए डिज़ाइन किए गए अंशकालिक तकनीकी स्कूल की एक संस्था होनी चाहिए।
 - ऋ) कृषि को एक उद्योग के रूप में वर्गीकृत किया जाना चाहिए और इसे जूनियर या सीनियर हाई स्कूलों के पाठ्यक्रम में शामिल किया जाना चाहिए
 - लृ) यह सुनिश्चित किया जाना चाहिए कि भविष्य के अध्ययन और करियर पथ के लिए पर्याप्त समर्थन और दिशा प्रदान की जाए

भारत में प्रचलित चुनावी माहौल और एक वैश्विक घटना के रूप में द्वितीय विश्व युद्ध की शुरुआत के कारण, इन प्रस्तावों का कार्यान्वयन उस समय संभव नहीं था।

सरकार समिति, 1945

ब्रिटिश भारत की सरकार ने देश में तकनीकी शिक्षा स्थापित करने की आवश्यकता को पहचाना। युद्ध की शुरुआत के बाद तकनीकी शिक्षा प्रदान करने की आवश्यकता अधिक स्पष्ट हो गई, क्योंकि युद्ध ने औद्योगिक उन्नति को महत्वपूर्ण प्रोत्साहन प्रदान किया। केंद्रीय शिक्षा सलाहकार बोर्ड ने युद्ध के बाद भारत में शैक्षिक विकास की प्रगति पर एक रिपोर्ट जारी की। भारत सरकार ने 1945 में भारत में तकनीकी शिक्षा की स्थिति की जांच करने और विशिष्ट और व्यावहारिक सिफारिशें प्रदान करने के लिए नलिनी रंजन सरकार के नेतृत्व में उद्योगपतियों और शिक्षाविदों की एक समिति नियुक्त करके एक महत्वपूर्ण कदम उठाया। समिति ने उच्च तकनीकी शिक्षा की सुविधाओं में तेजी से विस्तार को एक अनिवार्य आवश्यकता माना और सिफारिश की कि जल्द से जल्द चार उच्च तकनीकी संस्थान स्थापित किए जाने चाहिए, जिनमें से एक-एक भारत के उत्तरी, दक्षिणी, पूर्वी और पश्चिमी भागों में है।⁴²

इस प्रकार, भारत में तकनीकी शिक्षा के संबंध में ब्रिटिश नीतियां समय के साथ विकसित हुईं, जो औपनिवेशिक उद्देश्यों, आर्थिक हितों और सामाजिक गतिशीलता को दर्शाती हैं। सरकार ने इंजीनियरिंग कॉलेजों के माध्यम से सरकारी सेवाओं - इंजीनियरों, मैकेनिकल, इलेक्ट्रीशियन, ओवरसियर, सर्वेक्षकों, राजस्व अधिकारियों, स्कूलों, कपास मिलों और खानों में शिक्षकों के लिए प्रशिक्षण प्रदान किया। भारत

⁴² भारत में उच्च तकनीकी संस्थानों के विकास पर समिति (सरकार आयोग की रिपोर्ट), नई दिल्ली, 1948



सरकार ने चयनित छात्रों को छात्रवृत्ति के रूप में सहायता देने का निर्णय लिया था ताकि वे भारतीय उद्योगों के सुधार में अग्रणी भाग लेने के लिए यूरोप और अमेरिका में तकनीकी शिक्षा का कार्य करने में सक्षम हो सकें।

